International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9, Issue 5, May - 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

गढवाली भाषा और पर्यावरण परिवेश के कवि चन्द्रकुँवर बर्त्वाल

डॉ० मीना नेगी
रा०इ०का० फोल्ड, उत्तरका"ाी
उत्तराखण्ड

गढ़वाली भाषा का कोई को"ा नहीं है न उसका व्याकरण है। गढ़वाली भाषा 'गढ़वाली' कही जाती है। गढ़वाली भाषा का संस्कृत और प्राकृत दोनों से मिली जुली अवस्था में बनना पाया जाता है। कुछ–कुछ शब्द इसमें अब बाह्य सम्पर्क से अन्य भाषाओं के भी पाये जाते हैं।

यह कहना भी अनुचित न होगा कि गढ़वाल पर प्राचीनकाल में जब–जब पुराने निवासियों पर नवीन आगन्तुक जातियों का आधिपत्य होता गया प्राचीन भाषा नवीन आगन्तुक जातियों की भाषा से मिल–जुल कर एक और ही प्रकार की भाषा के रूप में बनती चली गई, और अब वह एक गढ़वाली भाषा कही जाती है। इस पर भी समस्त गढ़वाल में एक ही प्रकार की भाषा नहीं बोली जाती है, प्रत्येक प्रान्त की भाषा में आपस में अनेक शब्दों में भेद है। यद्यपि प्रत्येक प्रान्त के लोग एक दूसरे प्रान्त की भाषा समझ लेते हैं, परन्तु एक दूसरे की भाषा बोल नहीं सकते। नगर कस्बों में जो भाषा बोली जाती है उसको सभी समझ लेते हैं। कुमाऊँनी भाषा और गढ़वाली भाषा में इतना अन्तर नहीं कि एक दूसरे की बातचीत एक दूसरा न समझ सके। गढ़वाली–कुमाऊँ की सीमा पर जो लोग रहते हैं वे गढ़वाली और कुमाऊँनी भाषा मिली–जुली अवस्था में बोलते हैं। देहरादून, नजीबाबाद और गढ़वाल की सीमा में जो लोग रहते हैं वे 'कटमाली' बोलते हैं, अर्थात दे"ाी और गढ़वाली मिली–जुली। जो लोग सिरमौर जौनसार बाबर और गढ़वाल की सीमा पर रहते हैं वे जौनसारी और गढ़वाली मिली–जुली भाषा बोलते हैं। इससे यह नहीं कही जा सकता है कि समस्त गढ़वाल में एक ही भाषा एक ही लहजे के साथ बोली जाती है। गढ़वाल के दोनो भागों के कार्यालयों में दे"ाी भाषा का प्रचार है।[1]

गढ़वाली भाषा में सभी प्राचीन साहित्य, गीत और पवाड़ों के अतिरिक्त और कुछ नहीं पाया जाता है। गढ़वाली प्राचीन विद्वानों ने जो कुछ ग्रन्थ रचना की है वह सब संस्कृत में पाई जाती है जिनके नाम नीचे दिये जात हैं। प्रदीप रामायण और मानोदय काव्य, पं० मेधाकर बुघाणा की रचना है। वागी"ा ओझा ने 'वागी"ा' नामक एक तान्त्रिक ग्रन्थ की रचना की थी। पं० तुलाराम बुघाणा ने छः अध्याय का पृथ्वी छन्द में 'बदरी माहात्म्य' नामक ग्रन्थ की रचना की थी और वृहज्जातक और ग्रहलाधव पर टीका संस्कृत में की थी। पं० वासवानन्द ने एक ज्योतिष सारिणी ऐसी बनाकर छोड़ी है, जसमें वर्तमान समय के ज्योतिषी लोग अपना कठिन से कठिन काम हल कर लेते हैं। पं० हरिदत्त नौटियाल राज गुरू ने सब धर्म शस्त्रों का सार 1250 श्लोक स्त्रग्धरा छन्द में धर्मवल्लही नामक ग्रन्थ बनाया है तथा विष्णुस्मृति, लघु भागवत, गंगा लहरी, नक्षत्र माला स्तोत्र, वृतपयोनिधि, सभाभूषण नाटक, कामदूत काव्य श्रृंगारलता, स्मरदिपिका, रसविलास, काव्य दीपिका, रामदीपिका, रसकुतूक, 'ाड्ऋतु वर्णन, भोज्य वलि, गंगा नवरत्नमाला और 'ाड्ऋतु वर्णन (भाषा) वैद्यमनोत्सव (भाषा) ग्रन्थों की रचना की थी। उपरोक्त अन्य दो ग्रन्थों के जो भाषा में है शेष सब गद्य और पद्य में संस्कृत भाषा में लिखे गये थे पं० सहदेव घिल्डियाल और पं० गोविन्द प्रसाद घिल्डियाल ने दो पुस्तक गढ़वाली भाषा में लिखी है प्रथम का नाम है ''वारवलकाभिति रचित'' दूसरी का नाम है ''राजनीति'' इसके अतिरिक्त पं० लीला दत्त कोटनाला ने एक पुस्तक गढ़वाली भाषा में प्रका"ात की है जिसका नाम है ''गढ़वाली छन्दमाला''।[2]

गढ़वाल की ऐतिहासिक परम्परा में यक्ष, किन्नर, नाग, किरात, कोल, ख"ा, गुर्जर, हूण, कुमँयु आर्य आदि अनेक जातियों का उल्लेख मिलता है। और यहाँ की भाषा और संस्कृति पर सभी अपना थोड़ा बहुत प्रभाव छोड़ गये हैं।[3]

गढ़वाली साहित्य के सुधार में कुछ गढ़वाली दे"ा भक्तों का ध्यान आकर्षित हुआ है। सम्भव है धीरे–धीरे गढ़वाली साहित्य का सुधार हो जायेगा पूर्वकाल के विद्धान संस्कृत भाषा के प्रेमी थे इसलिए उन्होने जो कुछ ग्रन्थ रचना की सब संस्कृत में की। गढ़वाली भाषा से उनको वि"ोष प्रेम नहीं था परन्तु अब स्वदे"ा भाषा की कदर होने लगी है। गढ़वाल की पावन धरती अनादिकाल से ऋषि–मुनियों, इतिहासकरों तथा साहित्य प्रेमियों की तपःस्थली रही है। यहाँ अनेक साहित्य साधक अपनी तपःपूत साधना से साहित्य जगत को समृद्ध करते रहे हैं। जहाँ उत्तराखण्ड के छायावादी कवि सुमित्रा नन्दन पन्त को प्रकृति का सुकुमार कवि माना जाता है। भारत रत्न गोविन्द बल्लभ पन्त, इलाचन्द जो"ाी, डॉ० पिताम्बर दत्त बडथ्वाल, शेखर जो"ाी, डॉ० ि"ाव प्रसाद डबराल ''चारण'', श्रीदेव सुमन, लीलाधर जगूड़ी, मन्नू भण्डारी, कवि मोलाराम एवं गुमानी पन्त, मंगले"ा डबराल, गौरा पन्त (ि"ावानी), शैले"ा मटियानी आदि अनेक साहित्यकारों ने अपनी कृतियों से इतिहास जगत को मंडित किया है।

देवतात्मा हिमालय की गोद में बसा गढ़वाल अपने ऐतिहासिक और सांस्कृतिक महत्व तथा प्राकृतिक सौन्दर्य में अद्भुत है। ग्यारह लाख वर्ग–मील और लगभग पचास लाख जनसंख्या वाला गढ़वाल जनपद चमोली, रूद्रप्रयाग, पौड़ी,

टिहरी, उत्तरका"ाी, देहरादून, और हरिद्वार इन सात जिलो में विभक्त है। प्राचीन काल में यह प्रदे"ा ब्रह्मवर्त (ब्रह्मादे"ा या ब्रह्मर्षिदे"ा) के नाम से विख्यात था। पुराणों में केदारखण्ड के नाम से और पालि साहित्य में हिमवन्त के नाम से प्रसिद्ध हुआ। यहाँ के हिममंडित ऊँचे–ऊँचे पर्वत, हरे–भरे विस्तृत बुग्याल या पयार (चरागाह), दूर–दूर तक फैले चीड़, देवदार, बाँज के जंगल सारे प्रदे"ा को संगीतमय बनाने वाली नदियाँ लहलहाते सीढ़ीनुमा खेत, रूड़ (गर्मी) बसग्याल (बरसात) और ह्यूँद ("ीतकाल)– तीनों मौसमों में एक स्वर में बहने वाली बस्तियों की जलधाराएँ, उबलते पानी के स्त्रोत और कुण्ड, दर्पण के समान स्वच्छ जल के विस्तृत ताल, विचित्र हिमानियाँ और देवी–देवताओं के असंख्य मन्दिर सभी अनुपम है।

चन्द्रकुँवर बर्त्वाल भारत की गंगा–जमुनी संस्कृति के समर्थक थे। उनकी निगाहों में भारतीय संस्कृति का अर्थ केवल हिन्दू या इस्लामी नहीं है, बल्कि वे इस दे"ा को सांस्कृतिक विरासत को समझने और इसके आधारभूत सत्यों को समझना चाहते हैं। इसलिए वे आधुनिक कवि हृदय की पूर्णता के महत्व को समझते हैं। जब भारतीय संस्कृति की इस वि"ोषता का इस मूल्य का ह्रस देखते हे। तो तिलमिला उठते हैं चिन्तित हो उठते हैं। चन्द्रकुँवर बर्त्वाल जी अपनी कृति में व्यक्त कवि के सामाजिक सरोकारों की पहचान कर हिन्दू–मुस्लिमों की असहिष्णुता को बताते हैं। वे बाहर की दुनिया के सुख–दुःख को समस्याओं को बड़ी गम्भीरता से उठाते हुए मूल्यों की वास्तविकता को स्वीकार करते हैं। वे उनका टूटना, गिरना पसन्द नहीं करते। वे मानवीय मूल्यों के पक्षधर हैं। वे साथ मिलकार गाने हँसने–बोलने पर जोर देते हैं। दुःखों को मानवीयता से एक साथ बाँटने की बात करते हैं। चन्द्रकुँवर बर्त्वाल ने उत्तराखण्ड के ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण वि"वस्तर के महान साहित्यकरों की भाँति अपने दे"ा भारत के भौगोलिक मुकुट हिमालय के विषय में कहा है किः–

तुमसे पावन और उच्च कुछ भी पृथ्वी के

पास नहीं था, इसलिए पूजन करने की

अभिलाषा जब हुई उसे प्रभु के चरणों की,

तुम्हें उठा हाथों में कमलों की माला सी[4]

हिमालय की गोद से प्रवाहित होने वाली गंगा जैसी सुद"र्ानी और मंजुभाषिणी यहाँ पर है, वैसी और कहीं नहीं। उसके गुंजन में गुलाब की श्लथ"िथिल सुंगध का स्प"ा और धीरे–धीरे प्रवाहित होने वाली मृदभाषणी सुन्दर शान्त वातावरण का चित्र प्रस्तुत करती है।

पर्यावरण परिवेश

कवि बर्त्वाल के समय का पर्यावरण मानव प"ा–पक्षियों तथा समस्त प्राणियों के लिए स्वच्छ था। चारों तरफ का वातावरण स्वच्छ वायु से युक्त था। वायुमण्डल की निर्मलता चतुर्दिक धरा को कोमलता, मखमली हरीतमा सौन्दर्य प्रदान करती थी इससे मानव को धरा पर ही स्वर्गिक सुषमा का अवतरण देखने को मिलता था। कवि बर्त्वाल जी कहते हैं कि गंगा जैसी सुद"र्ानी और मंजुभाषिणी यहाँ पर है, वैसी और कहीं नहीं। उसके गुंजन में गुलाब की श्लथ"िथिल सुगन्ध का स्प"ा और धीरे से किवाड़ खोलकर प्रथम किरणों के लिए उस पथ को उन्मीलित करने वाली भैरवी की मृदुल मादक मिठास और उर्द्ध मीलित कोमल पहुँच है। मनुष्य जिस समाज एवं परिवे"ा में जीता है, वही उसका पर्यावरण होता है। हवा, पानी, मिट्टी, पेड़–पौधे से लेकर छोटे से छोटे प्राणी मात्र और मानव, सब के लिए इसमें स्थान है। गढ़वाल की मिट्टो से जुड़े कवि का मन–तन पूर्ण रूप से यहाँ की स्वच्छता, सुन्दरता, सरलता में रमा था। कवि बर्त्वाल ने भागीरथी गंगा को ही न जाने कितने नामों से सम्बोधित किया। ''जय जय कल्याणि अलकनन्दा शैलों में करती दून्दा, आनन्द रूप परमा नन्दा'' सुरसरी, गंगामाई, मंदाकिनी, भागोरथी गंगा के विभिन्न स्वरूपों का वर्णन किया है–

गिरि के श्रृंगों पर वहाँ जहाँ फिरते रहते प्रतिपल बादल।

जिनके ऊपर फैला रहता कुहरे सा सदा बर्फ शीतल।

उन गिरियों पर प्रति संध्या को कुछ रंग बिरंगी छायाएँ,

नाचती, देखकर, सब कहते वन–देवियाँ नाचती यहाँ।[5]

कवि ने अपने पर्यावरण की सुन्दरता का व्यवहारिक वर्णन करते हुये पर्वतीय शोभा से युक्त सौन्दर्य से हमें संगीत के स्वर देकर पर्वतीय प्रकृति के शान्त कोमल चित्र प्रस्तुत किए हैं। छायावादी कवि पन्त ने भी पर्यावरण से सम्बन्धित प्रकृति के स्पष्ट चित्र अपने 'ग्राम श्री' नामक रचना में गाँव की प्राकृतिक सुषमा और समृद्धि का मनोहारी वर्णन किया है–

''फैली खेतों में दूर तलक

मखमल की कोमल हरियाली,

लिपटी जिससे रवि की किरणें

चाँदी की सी उजली जाली।''

गढ़वाल तो प्रकृति का सुकुमार ि"ाु है! ऐसे वातावरण को देखकर जीने की इच्छा बढ़ती जाती है। कवि बर्त्वाल जी 'देहरादून' नामक कविता में लिखते हैंः–

आई वसुधा में रितुरानी, चाँदनी गगन में आ बिखरी

इस लज्जित मुख पर चम्पक मुखि। क्या स्वप्नमयी ज्योत्सना बिखरी

अपने धानों के खेतों की पतली डालें

पक कर झुकी हुई प्रसवोन्मुख पीली बालें

देख रहीं तुम हे शि"ाु–मुख, चुपचाप अकेली

भीनी–भीनी महक रही पर्वत की ढालें।

प्रमुदित होते हैं खग नभ में मुदित होती नरमयि नगरी

तुम नई फसल का अन्न काट, खलिहान भर रहीं सुन्दरी।[6]

''गढवाल का पर्यावरण यहाँ की जैव विविधता एवं भौगोलिक आकर्षण की वजह से इको टूरिज्म लोगों को बेहद रास आ रहा है। फूलों की घाटी का जिक्र आते ही एक रंग–बिरंगा संसार आँखों के सामने आ जाता है। पर्यटन प्रेमियों के लिए तो यहाँ जाना किसी सपने के सच होने से कम नहीं है। चमोली जनपद की प्रसिद्ध तीर्थस्थल बदरीनाथ धाम के पास गंध मादन पर्वत पर स्थित ह फूलों की घाटी या वेली ऑफ फ्लावर्स इतनी ही सुन्दर पर अपेक्षाकृत कम प्रसिद्ध फूलों की एक और घाटी हर की दून है।''[7]

हमारे परिवे"ा के चारों तरफ हमारा पर्यावरण भी विचरण करता है, जैसा हमारा परिवे"ा होगा वैसा ही हमारा पर्यावरण भी काम करेगा। कवि अपने परिवे"ा के विषय में बताते हैं किः–

''मैने जीवन भर पर्वत ही पर्वत देखे,

दुर्गम बर्फानी उजाड़ हिम धाम सरीखे!

उठते गिरते पथ का ही क्रम मैने जाना,

हिमि"ाखरों को नयनों ने सीखा अपनाना

गंगा गिरती है मेरे हिमगिरि के ि"ाखरों से

मैंने जीवन भर पर्वत ही पर्वत देखे!''[8]

उमा"ांकर सती"ा जी ने कहा है कि ''आज जीतू कविता पढ़ता हूँ, तो पर्वतीय जीवन बिताने की स्मृतियाँ कुरेदने लगती हैं। तब तक हिमालय प्रदे"ा स्वच्छ, पुनीत और प्रेरक था। कँठों में सत्य हृदय में अगाध प्रेम वाणी में शीतलता और गति में ऋजुता होती थी पर तथा कथित सभ्य लोग अब वहाँ भी पहुँच गए हैं।''[9]

हिमालय प्रदे"ा के सीमान्त क्षेत्र के चरवाहों में किन्नर स्वर, अनुपम रूप, मारूत सा बल, कैलास पर्वत–सी निर्मलता, कृष्ण की मधुर वं"ाी–सी अनुगूँज, मुख पर हिमगिरि–सी दीप्ति एवं प्रभा, नयनों में शारदीय कोमलता, वाणी में झरते हुए मेघों की–सी गतिमयता, चाल में चपलता और सघन बाँज वृक्षों की कठोरता आदि अनेक मानवीय गुण होते थे। यद्यपि प्रदूषण

बढता ही जा रहा है, पर आज भी हिमालयी क्षेत्र में स्वच्छता मिल जाती है और हिमपात होने पर ताजी पवन प्राणियों को स्प"र् करके उन्हें भी ताजा बना देती है।

जहाँ जरा सा फैला समतल, जहाँ बिछी है दुर्वा कोमल,

वहाँ बैठकर कृषक कुमारी किसका यह करती चिंतन है?

इसी प्रकार उमंग एवं उल्लास का वातावरण तैयार करने के उद्धे"य से बसन्त के आगमन का प्रथम दिवस धरती प्रेम से भरी हुई हो, रास्तों पर फूल झड़े हुए हों, चारों तरफ हरीतिमा के मध्य गायों का चरना और ग्वालों को बाँसुरी की सुरीली मीठी ध्वनि करते हुए प्रदर्"ति किया गया है। कवि ने पर्यावरण के परिप्रेक्ष में भी मन्द पवन, आमवृक्ष और पत्र वनों का उल्लेख किया है। सभी साधन पर्यावरण शुद्धता प्रदान करते हैं–

मन्द पवन बह रही आम्रवृक्षों के नीचे

मृदु कंपित करती के"ाों को, पत्र वनों–

सहसा सी चंचल कर देती और उन्हीं की

कंपन में विलीन हो जाती धीरे–धीरे![10]

आधुनिक समय में वृक्षों का कटाव बढ़ता ही जा रहा है। मानव अपने भैतिक सुख के लिए प्रकृति का दोहन करने में लगा है जो उसके विना"ा की ओर अग्रसर होने के लक्षण है।

पर्यावरण के प्रति जागरूक व्यक्ति की सोच का नमूना केरल के पलक्कड़ जिले में रहने वाले पे"ावर मूर्तिकार मोहन चावरा ने शहरी जिन्दगी को बड़े करीब से देखा। इनके पास सब कुछ था, जो शहरी जिन्दगी से जुड़ा होता ह, जिसे लोग वैभव भी कहते हैं। शहर की जिन्दगी से इनका मन भर गया था और ये प्रकृति के करीब रहना चाहते थे। ऐसा वातावरण चाहते थे, जिसमें पक्षियों की चह चहाहट हो बहते पानी की कल–कल हो, हवाओं में खु"ाबू हो, ठंढी–ताजी हवा बहती हो, हरा भरा शान्तिपूर्ण वातावरण हो, खान–पान शुद्ध हो, इसके साथ उनकी सोच यह भी थी कि यदि ऐसी प्रकृति के सामीप्य रहकर उनके बच्चों का विकास होगा, तो उनका व्यक्तित्व कुछ और ही निकल कर आएगा। यही कारण था कि वे अपने जैसी सोच वाले लोगों के साथ मिलकर एक ऐसा गाँव बसाना चाहते थे। उनकी इस सोच से सहमत चौदह परिवारों ने मिलकर भरतपुजा नदी के किनारे ढाई एकड़ जमीन खरीदी और अपने सपनों का गाँव बसाने में जुट गए। एक ऐसा गाँव बसाने लगे, जो सादगी से भरा हो जहाँ प्रकृति के साथ जन जीवन का तालमेल हो। यहाँ पर इन्होंने मिट्टी, लकड़ी और घस–फूस इकट्ठा करके घर बनाए। फिर पर्यावरण को नुकसान पहुँचाने वाले रबड़ के पेड़ों को हटाकर वहाँ फलों के वृक्ष लगाए। उन्होंने गाँव में एक प्राकृतिक वाटिका लगाई, जिसमें अनाज, सब्जियाँ आदि वे उगाने लगे। इस गाँव में रहकर इन्होंने जाना कि नदी के किनारे पेड़ों की छाँह में बैठकर केले के पत्ते पर भोजन करने का सुख ऐसा होता है, जो महँगे होटलों में भी नहीं मिल पाता। इसी के साथ धीरे–धीरे इन लोगों ने प"ुपालन भी शुरू किया। एकजुटता, सहभागिता व रचनात्मकता सोच की बुनियाद, पर खड़े इस गाँव को देखने के लिए भी लोग यहाँ आते हैं। हमारे आस–पास ही सब कुछ है, जिसका उपयोग करके हम अपनी समस्याओं का समाधान कर सकते हैं, वातावरण को स्वच्छ व सुन्दर बना सकत हैं, बस इसके लिए पूरे मन से प्रयास करने, अपने विचारों का इस्तेमाल करने की जरूरत है। वास्तव मे युवाओं में इतनी शक्ति है कि वे कोई भी कार्य पूर्ण कर सकते हैं। वे जैसा चाहें वैसा कर सकते हैं।[11] पर्यावरण को मानव हित में बनाये रखने का सर्वाधिक श्रेय हमारे पड़ों को जाता है। रवीन्द्रनाथः वृक्ष वंदना। में लिखा है–

.....तव प्राणे प्राणवान.....

सज्जित तोमार माल्ये जे मानव, तारि दूत हये

ओगो मानवेर बंधु! आजि एइ काव्य अर्ध्य लये अर्पिलाम....

'हे मानवबंधु वृक्ष! तुम्हारे प्राणों से जो प्राणवान है, तुम्हारे माल्य से जिसने अपना श्रृंगार किया है.....उस मानव का दूत बनकर तुम्हें अपना काव्य अर्पित कर रहा हूँ। यह है मानव–मन की दिव्य भावनाओं के प्रतिनिधि कवि की नि"छल कृतज्ञता का गीत! आदिकाल से ही वृक्ष ने मानव के प्रति बंधु और सुहृद–भाव दिखाया है – निभाया है। मनुष्य जब असहाय और दुर्बल था, वृद्धि और विकास के मार्ग पर कंपित चरणों से धीरे–धीरे आगे बढ़ रहा था, वृक्ष ने ही आकर अहेतुक भाव से उसे रोटी कपड़ा और मकान देने में न तो कोई कृपणता दिखाई और न ही किसी प्रकार का अहसान ही जताया। इसी परम सत्य को कालिदास ने इस प्रकार वाणी दी है–

न वृक्ष वृत्तिव्यतिरिक्त साधनः

वाह्य प्रकृति की अनुभूति, प्रतीति और वदान्यता को मानवमन पर प्रतिबिंबित करने में सर्वाधिक हाथ इन्हीं महाभाग वृक्षों का रहा है। ये प्रकृति के कुलावतंस हैं। मेघों का ध्वनित जलागम, मलय पवन का पुलकित प्रसरण, पष्पों के यौवन का अर्थपूर्ण स्फोट, पराग–गंधों का पागल विचरण– यह सब कुछ तथा इसके अतिरिक्त भी बहुत कुछ वृक्ष के आंदोलित अंतस् के ही अनुभाव हैं। इतना ही नहीं वह अंतरिक्ष की प्राणदा ओषजन का राजकोष है, भूमि के क्षरण और व्रण का अमृतांजन है। उसकी इसी महदा"ायता और प्राणवत्ता के द"ान कर यजुर्वेद के ऋषि ने उसे इस प्रकार नमस्कार किया है–

नमः वृक्षेभ्यः.....प"ूनां पतये नमः[12]

धरती के गृह द्वार पर आकर, गंधर्व–वधुओं सी जीवन के विविध रंगों के गीत नृत्य दिखाकर अग–जग को आलोकित करने वाली ऋतुओं को अपन श्रृंगार–विलास के लिए वृक्षों का आश्रय चाहिए वन–देवता को पुष्पों का उत्तिक्षप्त और उन्मुक्त मदोत्सव मानने के लिए सदैव चीड़ो के चिकने पदप्रांत की दरकार होती है–

किसी चीड़ के नीचे गाते–गाते रूक कर

करो विकीर्ण पुष्प उस तरू के पद मूलों पर।

नाचो तरूण चीड़ की छाया में दुर्वा पर,

नाचो प्रिय चुंबन से सुखव"ा कंपित होकर।[13]

पूर्व वैदिक मनीषा और जीवन–पद्धति में जो सरल, सात्विक लालित्य दिखाई देता है वह प्रकृति की उदारता के प्रति कृतज्ञता की भावना के सौन्दर्य से मंडित है। घनीभूत होकर यही भावना प्रकृति के नाना उपकरणों में बहुदेववाद की मूर्त्त कल्पना बन कर अवतरित हुई है। वृक्ष–पूजा इसी प्रतीक–पूजा की उद्भावना का एक अंग है। वृक्ष का यह पूजन मानव–मन के वि"वास की धार्मिक प्रदक्षिणा है जिसकी ओर बार–बार लौट कर अपनी आस्था को श्रृंगारित करता रहता है। इसीलिए काव्य स्वयं वे"ा–भूषा से सज्जित होकर प्रकृति के कुलावतंस इस वृक्ष की पूजा के लिए अभिप्रेरणा प्रदान करता रहता है।

मस्तक पर कर मलय–प्रभव चन्दन का लेपन

करो जलाकर धूप–दीप तरूवर का पूजन।[14]

भारत में चीड़ वन लगभग नब्बे लाख हेक्टेयर भूमि में फैल हुए हैं। सबसे ऊँचे पेड़ जौनसार और उत्तरका"ाी में पाए गए हैं–180 फुट तक। टौंस घाटी का चीड़ सर्वोत्तम माना जाता है इसकी अधिकतम आयु 120 वर्ष तक आँकी गयी है। क्षुद्र हिमालय की अनेक गिरिमालाएँ और उनके कंठ प्रदे"ा सघन, नीरंध्र चीड़ वानों से आच्छादित है।[15] हिमालय क्षेत्र में वन–विना"ा की सड़के चौड़ी होती जा रही हैं। इन सड़कों से होकर वहाँ का अर्थ तंत्र और लोक जीवन क्षीण होकर बाहर निकलता जा रहा है। वनों के निर्दय निरसन को देखकर दो सबसे बड़े वैदिक देवता–अंतरिक्ष स्थानीय इन्द्र और पृथ्वी स्थानीय अग्नी भी अपने अस्तित्व को समेटने लगे है![16]

संदर्भ संकेत

(1) पं० हरिकृष्ण रतूड़ी द्वारा रचित गढ़वाल का इतिहास–1995, भागीरथी प्रका"ान गृह सुमन चौक टिहरी। पृ०–99,
(2) वहीं पृ०–100
(3) गढ़वाली भाषा और उसका साहित्य लेखक डॉ० हरिदत्त भट्ट '"ैले"ा'' तक्ष"ाीली प्रका"ान नई दिल्ली 2007, पृ०–13–14
(4) बुद्धि बल्लभ थपलियाल, श्रीकंठ चन्द्रकुँवर काव्य संहिता सन् 1999 प्रका"ान जयश्री ट्रस्ट देहरादून, पृ०–14
(5) शम्भु प्रसाद बहुगुणा, हिमवन्त का एक कवि, सन् 1945, प्रका"ान घनानन्द इन्टर कॉलेज मसूरी पृ०–18
(6) उमा"ांकर सती"ा, चन्द्रकुँवर बर्त्वाल का कविता संसार सन् 2004, प्रका"ान चन्द्रकुँवर बर्त्वाल शोध संस्थान देहरादून, पृ०–117
(7) अमर उजाला, उत्तराखण्ड उदय, पृ०–177
(8) बुद्धिबल्लभ थपलियाल, श्रीकंठ, चन्द्रकुँवर काव्य संहिता सन् 1999 प्रका"ान जयश्री ट्रस्ट देहरादून, पृ०–25
(9) उमा"ांकर सती"ा, चन्द्रकुँवर बर्त्वाल का कविता संसार सन् 2004, प्रका"ान चन्द्रकुँवर बर्त्वाल शोध संस्थान देहरादून, पृ०–11
(10) बुद्धिबल्लभ थपलियाल, 'श्रीकंठ' चन्द्रकुँवर काव्य संहिता सन् 1999 प्रका"ान जयश्री ट्रस्ट देहरादून, पृ०–34
(11) अखण्ड ज्याति मई 2017, पृ०–32–33
(12) श्री बुद्धिबल्लभ थपलियाल 'श्रीकंठ' सम्मान ग्रंथ, डॉ० राज नारायण राय प्रका"ाक जय श्री ट्रस्ट देहरादून सन् 2004 पृ०–137
(13) वहीं पृ०–138
(14) वहीं पृ०–139
(15) वहीं पृ०–142
(16) वहीं पृ०–152